Sahitya Samhita (साहित्य संहिता)
Available at http://www.sahityasamhita.org/
ISSN 2454-2695
Volume 04 Issue 07
July 2018

सीढ़ियों पर सिगरेट

–निर्मल वर्मा-

१५ अक्तूबर १९९२

यहाँ डेढ़ महीने पहले आया था। बारिश की दुपहर, गहरा अवसन्न धुँधलका, भीतर उतना ही जितना बाहर हार्वर्ड यूनिवर्सिटी की छोटी लाइब्रेरी लेमॉट। उसके आगे एक छोटा सा घास का प्लॉट है, जिस पर हैनरी मूर की ताम्र मूर्ति लेटी है। चारों तरफ़ पत्थर की चौकी है, जिस पर छात्र छात्राएँ आराम करते हैं, जब दिन अच्छा हो और धूप निकली हो। सिगरेट पीने की भी यह थाह है। एक कोना।

एक दूसरा कोना है, लाइब्रेरी के भीतर। भीतर का भीतरी कोना, दो सफ़ेद लकड़ी की कुर्सियाँ, बीच में मेज़, दाईं तरफ़ शीशे की खिड़की, खिड़की के परे पेड़, जिसे मैं हर रोज़ देखता हूं जब यहाँ आता हूँ। पता नहीं, यह कौन सा पेड़ है, जो धीरे धीरे रोज़ झरता है, जैसे हम बुढ़ापे की ओर बढ़ते जाते हैं और उसकी कोई आवाज़ नहीं।

अनित्य, अनाम दुख।

बारिश की सुबह है। मैं डायना आइक की रिलिजन क्लास में बैठा हूं-बौद्ध धर्म पर लेक्चर। यह वही महिला हैं, जिन्होंने काशी पर वह सुंदर किताब लिखी थी, बनारस, द सिटी ऑफ़ लाइट- रोशनी का नगर। और यहाँ - बारिश का रुदन भरा दिन।

२३ अक्तूबर १९९२

हमारे घर के पास बच्चों का एक पार्क है। शनिवार और रविवार को यहाँ मैं अक्सर अलग-अलग कोनों में

किसी माँ को अपने बच्चे के साथ या किसी पिता को अपनी बच्ची के साथ खेलते देखता हूँ। इस सबको देखते हुए अक्सर मुझे कोई कहानी याद आती है, जो शायद कभी लिखी नहीं गई-अकेले पिता और अविवाहित मां के बीच अनवरत बातचीत जब कि उनके बच्चे खेल रहे हैं। शाम होते ही दोनों अपने-अपने बच्चों के साथ अपने अकेले फ्लैट में चले जाते हैं और पूरे एक सप्ताह तक नहीं मिलते - और जब अगला 'वीकएंड' आता है, तो फिर पार्क में एक-दूसरे से अपने-अपने बच्चों के साथ मिलते हैं फिर मेरा ध्यान भटक जाता है। पता नहीं, मैंने पार्कों और पबों को लेकर कितनी कहानियाँ लिख डाली हैं - और नहीं!

एक दुपहर जब मैं बाज़ार से लौट रहा था, तो मन में इच्छा हुई, कुछ देर एक बेंच पर बैठने की। मैंने देखा, एक बिल्ली पेड़ पर चढ़ते हुए एक गिलहरी का पीछा कर रही है - यहाँ की गिलहरियाँ भी इतनी मोटी-ताज़ी दिखाई देती हैं, कि उनके सामने अपने देश की पतली-दुबली गिलहरियाँ गाजर-मूली सी दिखाई देती हैं। वह गिलहरी पेड़ के धुर ऊपर फुनगी पर बैठ गई, जहां बेचारी बिल्ली की पहुँच नहीं थी और वह खिसियानी-सी होकर 'खंभा नोचते' हुए - नीचे उतर गई।

तभी मेरी निगाह एक नोटिसबोर्डनुमा तख़्ती पर गई, जिसे मैंने अब तक अनदेखा कर रखा था। उस पर एक व्यक्ति का नाम लिखा था, और वह नाम वही था, जिस नाम से वह पार्क जाना जाता था। वह कैंब्रिज के उन युवकों में से रहा होगा, जो पहले महायुद्ध में भाग लेने यूरोप गए थे। उसके नाम के आगे उसके जन्म-मृत्यु की तिथियाँ भी लिखी गई थीं - १८९६-१९१८। सिर्फ़ बाईस वर्ष की ज़िन्दगी! मृत्यु का महीना देखा, तो पता चला कि युद्ध समाप्ति के कुछ दिन पहले ही उस युवक की मृत्यु हुई जो यहीं कहीं पड़ोस में रहता होगा - सौ वर्ष पहले।

८ नवंबर, १९९२

किसी दिन बिलकुल धूप का दिन निखर आता है - वाइड्नर लाइब्रेरी की सीढ़ियों पर छात्र-छात्राएँ धूप सेंकते हुए अपना टिफ़िन खा रहे हैं। सामने मेमोरियल हॉल की सफ़ेद लंबी मीनार सर्दियों के नीले आकाश में एक

ISSN 2454-2695
Volume 04 Issue 07
July 2018

संगमरमरी शहतीर-सी दिखाई देती है। कुछ जापानी टूरिस्ट उसकी सीढ़ियों पर खड़े होकर हार्वर्ड यार्ड के उजले, सुनहरे, धूप में झिलमिलाते लॉन का फ़ोटो खींच रहे हैं।

यहीं, इसी लॉन पर मैं लेटा हूँ, नीले आकाश को ताकते हुए मेरी आंखें बार-बार नींद में मुँद जाती हैं, फिर खुल जाती हैं आश्चर्य होता है कि यहाँ आकाश में एक भी कौवा, चील, चिड़िया नहीं दिखाई देते, जबकि शायद ही कोई लमहा जाता हो, जब मैं अपनी दिल्ली की बरसाती से आकाश में किसी न किसी परिंदे को उड़ता हुआ नहीं देखता! मुझे अचानक मीरा बेन की याद आती है, इंग्लैंड से गांधी जी के वर्धा के आश्रम में आकर ठहरी थीं - पहले ही दिन उन्हें आश्रम में पक्षियों के उड़ते रेलों को देखकर घोर आश्चर्य हुआ था! ऐसा दृश्य उन्होंने इंग्लैंड में कभी नहीं देखा था।

सहसा पेड़ का एक पत्ता झरकर मेरी खुली किताब पर आ टपकता है - बिलकुल पीला और करारा। इस पत्ते को मैं मुनिया के पास भेजूँगा, यह जानने के लिए, वह किस पेड़ का हो सकता है?

१ दिसंबर, १९९२

सुबह से ही हवा का शोर सुनाई दे रहा है, बादलों से घिरा दिन, दिन में भी शाम का कुहासा। स्याही-सी रोशनी। दूर हवा की सी-सी करती सुनसान को भेदती सीटी 'रूसी सर्दियों' की याद दिलाती है, जो चेखव, तुर्गनेव, टॉलस्टॉय की कथाओं की स्मृति के साथ जुड़ी है। यह एक विचित्र रूप से मन हिलानेवाली आवाज़ है, उन सब आवाज़ों से अलग, जो हमें शहर के किसी साधारण दिन में सुनाई देती हैं। शीत की ठिठुरती ये आवाज़ें जैसे कोलंबस-पूर्व लैंडस्केप में गूँजती हैं जब कैंब्रिज, हार्वर्ड, बॉस्टन कुछ भी कहीं न थे; सिर्फ़ एक असीम वन-प्रांतर, बीहड़ जंगलों का विस्तार, चट्टानों के भीतर रहनेवाले अमरीकी-इंडियन आदिवासी और नंगी, आत्मनिमग्न लगभग अछूती धरती की सांसें - यह हवा जो अब भी वैसे ही घरों, गिरजों, यूनिवर्सिटी की इमारतों के अंदर बहती हुई चीखती है, जैसे हम कुछ न हों और जो बीता-गुज़रा है, वह धरती का एक दु:स्वप्न है, जिसमें हम प्रेत-छायाओं-से विचरते हैं।

ISSN 2454-2695
Volume 04 Issue 07
July 2018

मेरे कमरे की खिड़की के शीशे पर बारिश की बूँदें गिरती हैं और कमरे का फ़र्श एक हल्के, धीमे भूचाल में हिचकोले खाता हुआ बार-बार कंपता है - ट्रैफ़िक के झटकों से या झंझावात के झोंकों से, कहना असंभव है।

४ दिसंबर, १९९२

आज सुबह से बर्फ़ गिर रही है। बहुत झीने महीन बर्फ़ के फाहे जो मोटर गाड़ियों की छतों पर जमा होते जाते हैं, लेकिन ज़मीन पर गिरते ही पिघल जाते हैं। जब मैं बाहर सिगरेट लेने गया, तो वे मेरे सिर पर गिर रहे थे।

२८ मार्च १९९३

हवा में वसंत की छुअन। पेड़ अब भी नंगे हैं, लेकिन नीले आकाश को काटती उनकी शाखाएँ चाकू की धार की तरह इतनी साफ़ और चमकीली दिखाई देती हैं कि उनकी नग्नता भी किसी रहस्य को अनावृत करती जान पड़ती है, जैसे अपने पीछे किसी हरियाली का भेद, पत्तों का झुरमुट छिपाए है और इसकी टोह पक्षियों को मालूम है- आदमियों से कहीं अधिक - इसलिए वे बड़ी बहादुरी से अपने गोपनीय सुरक्षित स्थानों से निकल कर उल्लसित स्वर में चीखते हुए पेड़ों पर चक्कर लगाते हैं।

सड़क की साफ़ और चिकनी सतह धूप में नहाती है। फ़ुटपाथ के किनारों पर पुरानी बर्फ़ के मैले ढूह समेट दिए गए हैं, बीती हुई सर्दियों के सफ़ेद स्मारक। फिर यह अवसाद क्यों, जिन जाड़ों ने इतना सताया था, उनके लिए इतना घिरा हुआ मोह कैसा?

हार्वर्ड की यही तो 'अर्कीटाइप' स्मृति है- बर्फ़ से ढकी सड़कें, सफ़ेद रातें, साँय साँय करती हवा। किंतु इन दिनों मैं बीती हुई सर्दियों को नहीं शुरू शिशिर के पतझड़ी दिनों को याद करता हूं, जब हम यहाँ आए थे, हार्वर्ड स्क्वायर में संगीत लहरियाँ गूँजती थीं, हर जगह विद्यार्थियों के झुंड घूमते हुए दिखाई देते थे,

ISSN 2454-2695
Volume 04 Issue 07
July 2018

अख़बारों की स्टॉल पर पिक्चर पोस्टकार्ड, कैलेंडर, हवा में झूमते हुए फ़ैस्टून - यूनिवर्सिटी नगर का उत्सवी आनंद - हमने पूरे सीज़न का चक्र समाप्त कर लिया और अब विदाई के छोर पर आ खड़े हैं

२ अप्रैल १९९३

कैम्ब्रिज के पिछले महीने - मैं सितंबर में यहाँ आया था, मेरा प्रिय महीना! शिशिर का मौसम, मेरा प्रिय मौसम! मेपल के पेड़ धूप मे सुलगते थे। वह एक दुपहर जब मैं वाइड्नर लायब्रेरी के आगे घास पर लेटा था और मेपल का एक पत्ता मेरी छाती पर आ गिरा था।

लैमोन्ट लायब्रेरी के आगे हैनरी मूर की मूर्ति।

बोस्टन में एक दुपहर, बीकन हिल के पुराने घर, कभी हैनरी जेम्स के पात्र वहां रहते होंगे।

कमरे की खिड़की। गिरती हुई बर्फ़, लैंपपोस्ट के ईद-गिर्द उसके फाए उन मच्छरों की याद दिलाते थे, जो बारिश के दिनों में दिल्ली के लैंपपोस्टों के नीचे मँडराते हैं।

चीत्कारती हुई हवा, पुलिस या एंबुलेंस या फ़ायरब्रिगेड के हृदयभेदी सायरन। मेरा गिलास खिड़की के आले पर कांपता रहता और मैं भीतर के अंधेरे से बाहर की सफ़ेदी देखा करता

अप्रैल १९९३

जाने के सिर्फ़ छह दिन बचे हैं। हर सुबह एक ठंडा-सा आतंक देह में बर्फ़ की तरह जमा जान पड़ता है, फिर दिन बीतने के साथ वह धीरे-धीरे पिघलने लगता है।

कल दुपहर वाइड्नर लाइब्रेरी में बिताई। पोर्च की सीढ़ियों पर बैठकर सिगरेट पी। हार्वर्ड यार्ड में लोगों की भीड़, हँसते हुए लड़के-लड़कियां, फ्रेंच कैफ़े के आगे मेज़ों पर बैठे शतरंज में संलग्न खिलाड़ी। धमनियों में गूँजती हुई एक सुदूर स्मृति की धुन, धुँधले प्रेम की अथाह लालसा, स्वप्न, उदासी, खोयापन।

('धुंध से उठती धुन से साभार)